लिखी-पढ़ी: साक्षरता कार्यक्रम

जुही जैन

"कुंए का ठंडा जल
पीपल की छांव में
रुक जा सहेली बहन
आज मेरे गांव में"

यह उस गीत की पंक्तियां हैं जो पाठा क्षेत्र की सखियां आपको साक्षरता कैम्प में गुनगुनाती मिलेंगी। यह गीत इन सखियों की पढ़ने की इच्छा शक्ति का एक ठोस उदाहरण है और फिर जब हमसे-आपसे कोई कहे "हम अपना सीधा-आटा लेकर आएंगे और दस दिन इकट्ठे रहकर पढ़ेंगे" तो फिर बात कैसे ना बने।

माहौल तो पहले ही था

कर्वी में चल रहे महिला समाख्या कार्यक्रम के अंतर्गत काम कर रही सखियों को पढ़ाने के लिए माहौल तैयार करने में विशेष मेहनत नहीं करनी पड़ी। जब उनसे पूछा गया कि वे पढ़कर क्या करेंगी तो जवाब थे:

— "पढ़ें तो फड़मुंशी बन जाइबे"
— "कुछु ज्ञान आवे तो समझ-बूझ सकें"
— "मजदूरी पूरी पाइबे"
— "कोऊ हमार मजाक न बना सके"
— "लरका-बच्चा पढ़ाएं"

लिखी-पढ़ी

इसी माहौल को देखते हुए हमने साक्षरता कार्यक्रम 'लिखी-पढ़ी' शुरू किया। हम लोग यानि कि बीस-पच्चीस सखियां, पढ़ाने वाली सहेलियां इसमें जुड़ीं। हर महीने दस दिन का रहनुमा कैम्प लगाते हैं। गांव से दूर जिससे घर, पति, बच्चों की चिन्ता न रहे। मस्ती, नाच, गाने के लिए भी खुला माहौल हो। तीन महीने तक लगातार तीन कैम्प के बाद प्रशिक्षण खत्म होता है। हर कैम्प के बाद एक महीने का समय घर में पढ़ने के लिए था।

नमक से अनाज तक का सफ़र

शुरुआत 'क' 'ख' 'ग' से नहीं की गई। हमने चुने—हम औरतों की जिंदगी से जुड़े शब्द, 'नमक', 'अनाज' 'पानी'। जब तक एक शब्द पक्का नहीं हो जाता आगे नहीं बढ़ते। कार्ड, पोस्टर, मिट्टी, स्लेट की मदद से सीखते। ऊब जाते तो नाचते-गाते।

मोसे न बनत

इस तरह पढ़ाने में मुश्किलें भी काफी आईं। बच्चे कहते "दीदी, तोको गलत बताउती"। कुछ लड़कियां जल्दी सीख पातीं, कुछ बूढ़ी औरतें जिन्होंने कलम ही नहीं पकड़ी थी कहतीं, "मोसे न बनत"। कभी रोते, कभी हंसते, कभी ऊब जाते, कभी घर जाने को कहते। फिर भी एक लगन, एक उत्साह जो कम नहीं दिखता।

विदाई का समय

दिन बीतते जाते और घर लौटने का समय आता। हम गोले में बैठकर मूल्यांकन करते अपना, एक दूसरी का। गाने गाते, मज़ाक उड़ाते। कभी गजरा पिरोकर, कभी दीपक जलाकर विदा लेते। वापस चल पड़ीं हम अपने-अपने घरों को। □